5/12/2019----महान सुधारक (Great Reformers – Part 32)- Translation in Hindi, Kannada, Malayalam, Marathi, Punjabi, Sindhi, Sindhi, Tamil, Telgu - Examrace----Downloaded from examrace.com

Visit examrace.com for free study material, doorsteptutor.com for questions with detailed explanations, and "Examrace" YouTube channel for free videos lectures

Examrace

Examrace 463K

Login & Manage

महान सुधारक (Great Reformers – Part 32)

ठक्कर बापा:-

अमृतलाल विट्ठलदास ठक्कर या जिन्हें हम प्यार से 'ठक्कर बापा' के नाम से जानते है उनका जन्म 29 नवंबर, 1869 को गुजरात के भावनगर जिले में एक मध्यमवर्गीय परिवार में हुआ था। ठक्कर बापा ने 1879 से 1882 तक एक एंग्लो वर्नाक्यूलर विद्यालय में पढ़ाई की और 1886 में मैट्रिक की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की। बाद में उन्हें इंजीनियरिंग की पढ़ाई करने लिए पुणे भेज दिया गया जहाँ उन्होंने गोपाल कृष्ण गोखले और महादेव गोविंद रानाडे जैसी विभूतियों को जाना। बापा ने 1890 में इंजीनियरिंग (अभियंता) की परीक्षा पास करके एल सी आई यानी लाईसेंशिएट (अनुज्ञा प्राप्त) ऑफ (का) सिविल (नागरिक) इंजीनियरिंग (अभियंता) की उपाधि हासिल की। बापा को 1899 में पूर्वी अफ्रीका के देश युगांडा में रेलवे लाइन (रेखा) बिछाने के काम में नौकरी का प्रस्ताव मिला। वहाँ से लौटकर बापा ने महाराष्ट्र के सांगली में 1903 से 1905 तक स्टेट (राज्य) इंजीनियर (अभियंता) की नौकरी की। वहाँ से बापा मुंबई की नगरपालिका दव्ारा चेम्बूर इलाके में नियुक्त किये गये। यहाँ से बापा के जीवन में जो मोड़ आया, उसने उनके जीवन की राह बदल दी।

बापा की समाज सेवा का सबसे महत्वपूर्ण हिस्सा आदिवासियों के उत्थान के लिए किये गये कार्यों को माना जा सकता है। उनकी समाज सेवा में हरिजनों के सामाजिक कल्याण के लिए किये गये कार्य और तीसरे हिस्से में अकाल पीड़ितों की हरसंभव सहायता के कार्यों को रख सकते हैं।

आदिवासियों के लिए बापा का सेवा कार्य वर्तमान गुजरात राज्य के तत्कालीन पंचमहल जिले में शुरू हुआ। इसी जिले के शालोद-दाहोद इलाके में 1919 और 1922 में भयंकर अकाल पड़ा था। अकाल के दौरान मानवीय मदद पहुँचाने का काम बापा पहले भी कर चुके थे। बापा एक बार फिर राहत सहायता सामग्री लेकर इन अकाल ग्रस्त इलाकों में पहुँचे। लेकिन इस बार उनका वास्ता यहाँ रहने वाले 'भील' आदिवासियों से हुआ। इससे बापा को विकास की प्रक्रिया से पीछे छूट चुके इस समुदाय की समस्यायें समझने का एक व्यापक अवसर मिला। बापा को लगा कि इन भीलों का कल्याण स्थायी तौर पर शुरू हो सके, इसके लिए जरूरत है कि संस्थागत प्रकार के प्रयास ही नही किया ंतो यह समस्या इतनी जटिल है कि इसका व्यक्तिगत स्तर पर या फुटकर तरीके से मदद करके कल्याण संभव नहीं होगा। बापा का विचार था कि कुछ युवकों की मदद से इन भीलों को शिक्षित किया जाये और सभ्यता के आयामों से उन्हें क्रमश: परिचित कराया जाए। बापा ने एक योजना तैयार की जिसमें यह निश्चित किया गया कि करीब एक दर्जन ऐसे युवाओं की पहचान की जाए जो करीब तीन सालों तक यहीं के आदिवासी इलाकों में रहे और भीलों के कल्याण का काम करें। बापा ने इन युवाओं के दव्ारा काम किये जाने वाले कार्यो की सूची बनाई इनमें भील बच्चों की पढ़ाई, खेतीबाड़ी का काम सुधारने में मदद, सूदखारों के मकड़जाल से भीलों को बाहर निकालने में मदद करना और सरकारी मुलाजिमों के शोषण से बचाने जैसे कार्य शामिल थे। बापा ने भीलों की आर्थिक मदद के लिए ऋण देने वाली समितियों, छोटे उद्योग धंधे जैसे कताई-बुनाई का कामकाज चलाने की व्यवस्था का भी प्रस्ताव रखा।

भील सेवा मंडल का मुख्य केन्द्र दाहोद में बना कर बापा ने दस साल तक कठोर परिश्रम किया। इस मंडल के अध्यक्ष के तौर पर वह मंडल की गतिविधियों के सफल संचालन के लिए विभिन्न केन्द्रों का नियमित दौरा करते और केन्द्रों में आ रही समस्याओं को समझते और उन्हें दूर करने के लिए विचार विमर्श करते थे। इन केन्द्रों पर दौरे के दौरान बापा दो चीजों का विशेष ख्याल रखते थे। एक समय का और दूसरा सफाई का। अगर वह कोई कागज का टुकड़ा यूँ ही पड़े हुये देखते तो उसे स्वयं ही उठा कर कूड़े -दान में डालते और दूसरे के लिए

Visit examrace.com for free study material, doorsteptutor.com for questions with detailed explanations, and "Examrace" YouTube channel for free videos lectures

अनुकरणीय उदाहरण पेश करते और काम को समय पर पुरा करने में कोई कोताही नहीं बरतते थे। दाहोद में मंडल की गतिविधियों को विस्तार देने के बाद बापा ने झालोद पर अपना ध्यान केन्द्रित किया। उन्होंने झालोद में 21 नवंबर, 1923 को भील सेवा मंडल खोला। मंडल के कामों को व्यवस्थित रूप देने के बाद उन्होंने देश के बाकी हिस्सों में चल रहे आदिवासियों के कल्याण के काम की जानकारी लेने का मन बनाया। बापा ने 1926 के शुरूआती महीनों में छत्तीसगढ़ के रायपुर एंव मांडला जिलों और झारखंड एवं पश्चिम बंगाल के आदिवासी जिलों का दौरा किया। इस दौरान उन्होंने आदिवासियों की आर्थिक और सामाजिक समस्याओं तथा रीति-रिवाजों का बारीकी से अध्ययन किया। बापा के इन अनुभवों का गांधी जी ने अपने अखबार नवजीवन में दो लेखों में प्रकाशित किया। बापा को 1932 में गांधी जी का आदेश मिला कि दिल्ली आकर हरिजन सेवक संघ का कामकाज संभाले।

बापा के आदिवासियों के उत्थान के लिए किये गए कामों के अनुभवों को देखते हुए संविधान सभा ने आदिवासी समुदाय संबंधी राजनीतिक और सामाजिक ढांचे की पहचान के लिए एक उपसमिति बनाई। बापा ने मिजोरम की लुशाई पहाड़ियों की यात्रा ऐसे विपरीत समय में पूरी की जहाँ जाना असंभव ही जान पड़ता था। समिति की रिपोर्ट (विवरण) में अनुशंसा की गयी कि आदिवासियों के कल्याण के लिए भारत सरकार के कोष से खर्च हो। आदिवासियों के कल्याण के लिए उठाया गया यह कदम मील का पत्थर साबित हुआ।

उन दिनों गुजरात में अछूतों को 'अन्त्यज' पुकार जाता था। गुजरात अन्त्यज सेवा मंडल की स्थापना 1923 में हुई और बापा इसे प्रथम अध्यक्ष के रूप में चुने गये। यह मंडल भी भील सेवा मंडल की तर्ज पर काम करता रहा। इस मंडल ने अपने शुरुआती दौर में अन्त्यजों के लिए करीब 30 पाठशालाएँ खुलवा दीं। उन दिनों अन्त्यजों का सेवा काम बहुत मुश्किल हुआ करता था। 1932 में जब गांधी जी के हरिजन सेवक संघ (जो कि पहले अस्पृश्यता निवारण संघ के रूप में जाना जाता था) की अध्यक्षता घनश्याम दास बिड़ला को सौंपी गई तो उन्होंने इस प्रस्ताव को स्वीकार करने के एवज में मंत्री पद पर बापा को नियुक्त करने की मांग बापू से की। बापू के निर्देश पर बापा दिल्ली चले गये और यह कठिन जिम्मेदारी स्वीकार कर ली। वास्तव में हरिजन सेवा संघ का काम बापा के लिए नया नहीं था। कुछ महीनों में उन्होंने इसकी शाखाएँ करीब सभी राज्यों में स्थापित कर दीं। उन्होंने एक बार बापू को पत्र लिख कर पूछा कि क्या वह अस्पृश्यता निवारण के लिए देश के विभिन्न भागों का दौरा करेंगे। इस पर बापू ने उत्तर दिया-आपका यह विचार बड़ा अच्छा है। मुझे किस प्रकार और कहाँ-कहाँ जाना, होगा इसका कार्यक्रम तैयार करके भेज दें। बापा गांधी जी के साथ देश के दौरे पर निकल पड़े। करीब नौ महीने तक की इस यात्रा ने देश में अस्पृश्यता के विरोध का माहौल उत्पन्न कर दिया। 1932 से लेकर 1951 तक बापा ने हरिजन सेवक संघ का काम करते हुए देश के माथे से छुआछूत का कलंक मिटाने का भरसक प्रयास किया। बापा के प्रयासों से ही भारतीय आदिम जाति सेवक संघ की स्थापना 24 अक्टूबर, 1948 में दिल्ली में की गई।

ठक्कर बापा का काम अकाल, अछूतोदव्ार और आदिवासी सेवा तक ही सीमित नहीं था। बापा अराजनीतिक व्यक्ति थे तब भी उन्होंने देशी राज्यों की जनता की आवाज उठाई। उन्होंने गांधी जी के गरीबी से लड़ने वाले महाअस्त्र चरखे और खादी के प्रयोग को प्रचारित करने का भी विशद कार्य किया। इसके अलावा उन्होंने ग्रामीण स्त्रियों और बच्चों के कल्याण के लिए अनेक कार्य किये। उन्होंने कस्तूरबा ट्रस्ट (संस्था) के मंत्री के तौर पर भी काम किया। 19 जनवरी, 1951 को इस महान सामाजिक कार्यकर्ता ने अंतिम सांस ली।

बाबा आम्टे:-

विख्यात समाजसेवक बाबा आम्टे का जन्म 1914 ई. में वर्धा के निकट एक ब्राह्मण जागीरदार परिवार में हुआ था। उनका बचपन बहुत ही ठाट-बाट से बीता। बाबा आम्टे के मन में सबके प्रति समान व्यवहार और सेवा की भावना बचपन से ही थी। बाबा आम्टे ने नागपुर विश्वविद्यालय में कानून की पढ़ाई की और कई दिनों तक वर्धा में

Visit examrace.com for free study material, doorsteptutor.com for questions with detailed explanations, and "Examrace" YouTube channel for free videos lectures

वकालत की। परन्तु जब उनका ध्यान अपने मुल्क के लोगों की गरीबों की ओर गया तो वकालत छोड़कर वे समाज के पिछड़े समूहों की सेवा में लग गए।

1942 में भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान वे जेल गए। नेताओं के मुकदमे लड़ने के लिए अपने साथी वकीलों को संगठित किया और इन्हीं प्रयासों के कारण ब्रिटिश सरकार ने उन्हें गिरफ्तार कर लिया। लेकिन वरोरा में कीड़ों से भरे कुष्ठ रोगी को देखकर उनके जीवन की धारा बदल गई। उन्होंने अपना वकालती चोगा और सुख-सुविधा वाली जीवन शैली त्यागकर कुष्ठरोगियों और दलितों के बीच उनके कल्याण के लिए काम करना प्रारंभ कर दिया।

बाबा आम्टे ने कुष्ट रोग से पीड़ित लोगों की सेवा और सहायता का काम अपने हाथ में लिया। कुष्ठ रोगियों के लिए बाबा आम्टे ने सर्वप्रथम ग्यारह साप्ताहिक औषधालय स्थापित किए, फिर 'आनंदवान' नामक संस्था की स्थापना की। उन्होंने कुछ की चिकित्सा का प्रशिक्षण तो लिया ही, अपने शरीर पर कुष्ठ निरोधी औषधियों का परीक्षण भी किया। 1951 में 'आनंदवन' की रजिस्ट्री (पंजीकरण) हुई। सरकार से इस कार्य के विस्तार के लिए भूमि मिली। बाबा आम्टे के प्रयत्न से दो अस्पताल बने। विश्वविद्यालय स्थापित हुआ, एक अनाथालय खोला गया, नेत्रहीनों के लिए विद्यालय बना और तकनीकी शिक्षा की भी व्यवस्था हुई। 'आनंदवन' आश्रम अब पूरी तरह आत्मनिर्भर है और लगभग पांच हजार व्यक्ति उससे आजीविका चला रहे हैं। बाबा आम्टे ने चंद्रपुर जिले (महाराष्ट्र) के वरोरा के निकट अपने इस आश्रम को आधी सदी से अधिक समय तक विकास के विलक्षण प्रयोगों की कर्मभूमि बनाए रखा। जीवनपर्यन्त कुष्ठरोगियों, आदिवासियों और मजदूर-किसानों के साथ काम करते हुए उन्होंने वर्तमान विकास के जनविरोधी चरित्र को समझा और वैकल्पिक विकास की क्रांतिकारी जमीन तैयार की। आनंदवन की महत्ता चारों तरफ फैलने लगी, नए-नए रोगी आने लगे और 'आनंदवन' का महामंत्र श्रम ही है श्रीराम हमारा सर्वत्र गूँजने लगा। आज "आनंदवन" में स्वस्थ, आनंदमयी और कर्मचारियों की एक बस्ती बस गई है। भीख माँगनेवाले श्रम करके पसीने की कमाई उपजाने लगे हैं। किसी समय 14 रूपयें में शुरू हुआ "आनंदवन" का बजट आज करोड़ों में है। आज 180 हेक्टेयर जमीन पर फैला "आनंदवन" अपनी आवश्यकता की हर वस्तु स्वयं पैदा कर रहा है। बाबा आम्टे ने "आनंदवन" के अलावा और भी कई कुष्ठरोगी सेवा संस्थानों जैसे, सोमनाथ, अशोकवन आदि की स्थापना की है जहाँ हजारों रोगियों की सेवा की जाती है और उन्हें रोगी से सच्चा कर्मयोगी बनाया जाता है।

बाबा आम्टे ने राष्ट्रीय एकता को बढ़ावा देने के लिए 1985 में कश्मीर से कन्याकुमारी तक और 1988 में असम से गुजरात तक दो बार भारत छोड़ों आंदोलन चलाया। नर्मदा घाटी में सरदार सरोवर बांध निर्माण और इसके फलस्वरूप हजारों आदिवासियों के विस्थापन का विरोध करने के लिए 1989 में बाबा आम्टे ने बांध बनने से डूब जाने वाले क्षेत्र में निजी बल (आंतरिक बल) नामक एक छोटा आश्रम बनाया।

बाबा आम्टे को उनके इन महान कामों के लिए बहुत सारे पुरस्कारों से भी सम्मानित किया गया। उन्हें मैग्सेसे अवार्ड (पुरस्कार), पद्मश्री, पद्मविभूषण, बिड़ला पुरस्कार, मानवीय हक पुरस्कार, महात्मा गांधी पुरस्कार के साथ-साथ और कई पुरस्कारों से नवाजा गया। उनका 9 फरवरी, 2008 को आनंदवन में निधन हो गया। बाबा आम्टे के पुत्र डॉ. प्रकाश और पुत्रवधु डॉ. मंदाकिनी आम्टे भी उनके कार्य को आगे बढ़ा रहे है। इस आम्टे दंपती को सामुदायिक नेतृत्व के लिए प्रतिष्ठित 'रेमन मैग्सेसे पुरस्कार' के लिए भी चुना गया।